शिक्षा एक चुनौती
शिक्षण–प्रशिक्षण कार्यशाला
28 जून से 4 जुलाई 1999,
लैन्सडाउन, गढ़वाल

दिनांक 28 जून से 4 जुलाई तक लैन्सडाउन (गढ़वाल) में निरंतर द्वारा एक शिक्षण प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित की गई।
'निरन्तर' एक संदर्भ समूह है जो महिला और किशोरियों की शिक्षा पर कार्य कर रही है। जिसका मुख्य उद्देश है – **महिला विकास एवं महिला शिक्षा के जुड़ाव को मज़बूत बनाना। निरंतर गांव में काम करने वाले विभिन्न समूहों के साथ मिल कर प्रशिक्षण करना और पठ्न–पाठ्न सामग्री भी तैयार करती है।**

प्रशिक्षण के उद्देश्य

- शिक्षा के प्रति नज़रिया क्या है? गांव की महिलाओं एवं किशोरियों के लिए किस प्रकार की शिक्षा सार्थक है।
- सशक्तिकरण और पढ़ने–लिखने की योग्यता को कैसे एक साथ जोड़ा जाए।
- पढ़ाने के तरीके पर रचनात्मक समझ बनाना। शिक्षक/शिक्षिका की आत्मछवि के साथ तार्किक क्षमता और आत्मविश्वास को मज़बूत करना, जिससे सीखने सीखाने की प्रक्रिया में एक और कड़ी जुड़ सके।
- वर्ग, जाति और लिंग का शिक्षा पर क्या असर है। (शिक्षा के अवसरों में, शिक्षा की व्यवस्था और पाठ्यक्रम में यह गैरबराबरी किस तरह से दिखाई देती है।) इसके अलग–अलग पहलुओं की एक झलक।

इन्हीं उद्देश्यों को लेकर यह शिक्षण–प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित की गई।
इस कार्यशाला में दो तरह के प्रतिभागी थे।

1 कुछ प्रतिभागी ऐसे थे जो विभिन्न स्वयं सेवी संस्थाओं से आए थे। इनके पास शिक्षा के क्षेत्र में औरतों और लड़कियों के साथ काम करने का अनुभव नहीं था। अब वे महिलाओं और किशोरियों की शिक्षा पर कार्य करने जा रहे हैं। ये संस्थाएं थीं, आरोही – (अल्मोड़ा), सहयोग – (नैनीताल), ग्रामरस – (बनारस), नव सृष्टि – (दिल्ली), देवी संस्थान – (लखनऊ)।

2 कुछ प्रतिभागी ऐसे थे जो एक नए सिरे से शिक्षा के कार्य में जुड़ने जा रहे थे। इनमें महिला समाख्या उत्तर प्रदेश के सहभागी, जो कि नए महिला शिक्षण केन्द्र (म. शि. के.) में पढ़ाने जा रही थी।
अतः इन दोनों ही तरह की प्रतिभागियों को ध्यान में रखकर इस प्रशिक्षण की रूपरेखा तैयार की गई थी। जिससे सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में दोनों प्रतिभागियों की पूर्ण सहभागिता हो सके।

प्रशिक्षण की प्रक्रिया

प्रशिक्षण की प्रक्रिया शिक्षिकाओं को ध्यान में रख कर बनाई गई थी, जिससे वह खुद सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में जुड़ सके। इस प्रक्रिया से शिक्षिकाओं की पढ़ाने की विधि एवं पद्वति पर एक व्यापक समझ बनें। उनमें आत्मविश्वास बढ़े शिक्षा से जुडी मूल प्रक्रियाओं को अपनाने में। इसके लिए उन्हें गतिविधियों के माध्यम से ऐसी स्थिति में डाला गया जिसमें वह खुद सोचने–समझने पर मजबूर हो। जो भी गतिविधि और कार्य कराए जा रहे थे उन्हें वो सिर्फ मनोरंजन की तरह ना लें। बल्कि उसे सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में अपना सके। शिक्षिकाओं के शैक्षिक अनुभवों को ध्यान में रखकर उन्हें शैक्षिक मुद्‌दों के साथ जोड़ने की कोशिश की गई। कार्यशाला में जो भी कार्य, चर्चा या गतिविधियां करवाई गई वो ज़्यादातर सामूहिक थीं। सामूहिक रूप से इसलिए करवाई गईं जिससे वो समूह के अन्य प्रतिभागियों के अनुभवों और विचारों से अवगत हो। कुछ कार्य एकाकी भी करवाएं गए जो व्यक्तिगत क्षमताओं पर आधारित थे।
इस प्रशिक्षण की एक खास बात यह थी कि गतिविधि और पद्धति पर विस्तृत रूप से चर्चा की गई और प्रतिभागियों के सामने उनका विश्लेषणत्मक रूप रखा गया। इन पर प्रतिभागियों के अनुभव को महत्व दिया जाता था। इससे शुरूआत में प्रतिभागीयों को थोड़ी परेशानी तो हुई। उन्हें लग रहा था कि प्रशिक्षण में किसी भी गतिविधि और चर्चा या पद्धति का निष्कर्ष नहीं बताया जा रहा है। उनमें एक द्वन्द्वनात्मक स्थिति बन गई कि सारा कुछ खुला है प्रशिक्षणगण किसी भी बात का निष्कर्ष नहीं दे रहे हैं। पर शीध्र ही उन्हें यह समझ में आने लगा कि जब तक किसी भी मुद्दे या गतिविधि के हर पहलू पर विश्लेष्णात्मक रूप से चर्चा नहीं की जाए तब तक किसी निष्कर्ष पर नहीं आ सकते। किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए उस विषय के हर पहलु को अच्छी तरह देखना बहुत आवश्यक है। क्योंकि भविष्य में जब वो क्षेत्र में जाएंगे तो ऐसी स्थिति आएगी, जहां उन्हें हर पहलुओं पर ध्यान देना पड़ेगा।

हालांकि प्रतिभागियों के स्तर और अनुभवों में भिन्नता थी। फिर भी कई ऐसे विषय और मुद्दे थे जिन पर इन प्रतिभागियों की क्षमता बढ़ाने की आवश्यकता थी –

- विषयों और मुद्दों पर स्पष्टता
- विश्लेषणात्मक क्षमता
- शैक्षणिक पद्धति पर समझ

विषयों और मुद्दों पर स्पष्टता

वर्ग एवं शिक्षा

समाज में जिस तरह वर्ग की विभिन्नता दिखाई देती हैं उसे तो हम सभी जानते हैं और देखते भी है। पर क्या इस तरह की गैरबराबरी शिक्षा के क्षेत्र में भी है। जिस तरह की शिक्षा हमें दी जाती है या जिस तरह की शिक्षा की बात हम करते है क्या वह समान रूप से सबको मिल पाती है ? क्या किसी एक वर्ग विशेष का होने की वजह से शिक्षा में असमानता हो जाती है ? वर्ग एवं शिक्षा का जुड़ाव किस तरह से है ? वर्ग और शिक्षा को लेकर प्रतिभागियों की अपनी क्या समझ है और उनका अपना क्या नज़रिए हैं ? इस पर समझ बनाने की कोशिश की गई। इसके लिए कुछ गतिविधियां और चर्चाएं की गईं।

गतिविधियां

सर्वप्रथम जो गतिविधि करवाई गई वो प्रतिभागियों के अपने अनुभव पर आधारित थी जिसमें उन्होंने अपनी शिक्षा का पुनर्वालोकन किया। उन्हें पांच–पांच के समूहों में बांट कर कुछ सवाल दिए गए थे। ये सवाल इस तरह से थे –

- आपने किस तरह के स्कूल में शिक्षा प्राप्त की।
- स्कूल की व्यवस्था कैसी थी।
- कितने शिक्षक/शिक्षिकाएं थीं।
- क्या शुल्क था।
- स्कूल में क्या–क्या सुविधाएं थीं। जैसे – खेलने का मैदान था या नहीं, स्कूल से कहीं बाहर घूमने जाते थे या नहीं, पुस्तकालय था या नहीं इत्यादि।
- किस तरह के अवसर हमें स्कूल में मिले। कभी भाषण, खेलकूद, नाटक या किसी अन्य प्रतियोगिता में भाग लिया या नहीं।
- अपने अभी तक जितनी भी शिक्षा ली उसमें कुल कितना खर्च हुआ।

सभी प्रतिभागियों ने इन प्रश्नों पर अपने समूहों में चर्चा की और चार्ट पेपर पर अपने जवाब लिखें। फिर सभी समूहों से आए जवाबों को सामने रखा गया। और एक बड़े चार्ट पेपर पर खाका बनाया गया, जिसमें कई महत्वपूर्ण तथ्य निकल कर आए। पहले सवाल का जवाब काफी रोचक था। जिसमें करीब–करीब हर प्रतिभागियों का अलग–अलग अनुभव निकला। किसी की शिक्षा सरकारी स्कूल में हुई थी और सरकारी स्कूल भी दो तरह के थे। जैसे – गांव और शहर के सरकारी स्कूल। इसके अलावा नगरपालिका स्कूल, कस्बे का स्कूल, प्राइवेट स्कूल में मान्टेसरी, कानवेन्ट, पब्लिक स्कूल, धर्मिक संस्थाओं द्वारा चलाए जा रहे स्कूल, क्लब स्कूल, आर्मी स्कूल, रेलवे स्कूल भी थे।

इन स्कूलों में सुविधाएं भी अलग–अलग थी। जैसे – सरकारी स्कूलों में जहां एक ही शिक्षक करीब 150 बच्चों को एक साथ सभी विषय पढ़तेपहीं दूसरी तरफ प्राइवेट स्कूलों में हर विषय के लिए अलग–अलग शिक्षक थे। और कक्षा में भी बच्चो की संख्या कम थी। इन स्कूलों में शिक्षा के स्तर में भी बहुत अंतर था। सरकारी स्कूलों में अगर फीस कम थी, तो बच्चों की संख्या ज्यादा थी और शिक्षा का स्तर भी बहुत खराब था। यही नहीं, पढ़ने–लिखने के अवसर ही बहुत शोचनीय थे। अन्य सुविधाएं का तो कोई स्थान ही नहीं था। वहीं प्राइवेट स्कूलों में जहां शिक्षा का स्तर अच्छा माना जाता है वहां की पढ़ाई बहुत ही खर्चीली थी। और सुविधाएं भी अच्छी खासी थीं।

इन जवाबों को देख कर समूहों में यह सवाल आया कि शिक्षा में इतनी भिन्नता क्यों है? सभी को शिक्षा के एकसमान अवसर क्यों नहीं मिलते हैं? किसी एक वर्ग विशेष के लिए तो शिक्षा की सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं और वहीं दूसरे वर्ग के लिए शिक्षा एक अवधारणा है?

इन जवाबों पर हुई चर्चाओं और चार्ट पेपर पर बने खाके से यह निकल कर आया कि समाज में वर्ग विभिन्नता हैं। एक तरफ है उच्च वर्ग जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है समाज में उनका उच्च स्थान है और सारी सुविधाएं भी उनको मिली हुई है। दूसरी तरफ हैं निम्न वर्ग जिनकी आर्थिक स्थिति तो खराब है ही, साथ समाज में निम्न स्थान पर भी है। उनके लिए सारी सुख सुविधाएं तो एक सपना हैं। जहां अच्छी शिक्षा की बात है, तो रोटी के लिए पैसे जुटा पाना ही इतना मुश्किल होता है, कि वो भला इतनी मंहगी शिक्षा के बारे में कैसे सोच सकते है ?

इन्हीं चर्चाओं के दौरान यह निकल कर आया कि जब हमारी शिक्षा में ही इस तरह की भिन्नता है तो क्या हम इसके प्रति जागरूक और संवेदनशील है ? इस भिन्नता

पर हमारी क्या समझ है ? अगर हम कहते है कि हां हम इस विभेदीकरण को जानते हैं, तो क्या हमने अपने को कभी अपने को उस जगह रख कर सोचा है? इस विषय पर सोचना इसलिए ज़रुरी है क्योंकि हम समाज के इन्ही गरीब वर्ग समूहों के साथ कार्य करने जा रहे हैं। जब तक हमारी खुद की समझ वर्ग के प्रति स्पष्ट नहीं होगी तब तक शिक्षा और वर्ग का जुड़ाव भी नहीं समझ पाएंगे। अतः ज़रुरी है कि हम खुद वर्ग और शिक्षा के मुद्दों पर संवेदनशील हों।

इस चर्चा से एक और सवाल सामने आया कि सरकार तो गरीब वर्ग की शिक्षा के लिए काम कर रही है। पर जिस तरह की शिक्षा उन्हें मिल रही है वो कितनी सार्थक है या उसकी गुणवत्ता क्या है ? अगर गरीब परिवारों से मां–बाप अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेज रहे हैं तो इसमें क्या उनका दोष है। अक्सर ये कह कर हम टाल देते हैं चूंकि गरीब पढ़े–लिखे नहीं होते इसलिए वो पढ़ने–लिखने का महत्व नहीं जानते है। वो अपने बच्चों को काम में लगाना चाहते हैं जिससे पैसे ज़्यादा आए। पर इसके लिए केवल गरीब को दोष देना क्या ठीक होगा। क्या सरकार ने या हमने कभी ये सोचा हैं कि जिस तरह की शिक्षा या स्कूल गरीबों के लिए हैं। उनमें किसी तरह की शिक्षा मिल रही ? इन स्कूलों में ऐसी शिक्षा है जिसका कोई स्तर ही नहीं है। सिर्फ लिखना या पढ़ना आना ही तो शिक्षा नहीं। आज अलग–अलग तरह के स्कूल यह निश्चत कर देते हैं कि चौकीदार का बेटा/बेटी चौकीदारी तक ही सीमित रहें। और उच्च वर्ग के बच्चों को ओ बढ़ने के नए–नए मौके मिलें। इन स्कूलों में ऐसी शिक्षा दी जाती हैं जिनको लेकर गरीब ना तो अपने जीवन का कोई उद्देश्य ढूंढ सकते हैं ना ही कोई उचित व्यवसाय कर सकते हैं। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रख कर **प्रोब रिर्पोट** के कुछ आंकड़े प्रस्तुत किए गए।

प्रोब रिर्पोट में लिंग, वर्ग और जाति का शिक्षा पर क्या प्रभाव हैं तथा एक विशेष वर्ग, लिंग और जाति का होने पर शिक्षा क्यों नहीं मिल पाती हैं – इस पर आंकड़े संकलित किए गए है। इस रिर्पोट में चार राज्य मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान, उत्तरप्रदेश को शिक्षा के क्षेत्रा में बीमार घोषित किया गया। इस रिर्पोट में शिक्षा पर सर्वे कर कुछ सवालों पर चर्चा की गई जैसे –

सरकार ने गरीबों की शिक्षा मुफ्त की है फिर भी क्या वजह है कि मां–बाप अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते हैं?

- **मां बाप का जवाब था कि हमारी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है । एक बच्चे की पढ़ाई पर हमें सालाना 318 रूपया खर्च करना पड़ता है। बहुत ही**

मंहगी शिक्षा है। हम कैसे पढ़ाएं?

- **बिहार के एक मजदूर का कहना था कि हमें अपने तीन बच्चों की पढ़ाई के लिए 40 दिन की मज़दूरी और करनी पड़ेगीं।**
- **जिनके बच्चे कभी भी स्कूल नहीं गए उनका कहना था कि पढ़ाई पर बहुत ही खर्च है जिसको हम नहीं वहन कर सकते।**

इस रिर्पोट से यही निकल कर आया कि सरकार ने भले ही गरीबों की शिक्षा को मुफ्त कर दिया है पर सच्चाई यह है कि गरीबों को हर हाल में शिक्षा के लिए पैसा लगाना पड़ता है। जो गरीब आदमी के वश की बात नहीं है।
इसके बाद प्रतिभागियों की अपनी समझ वर्ग और शिक्षा को लेकर क्या है उसे स्तष्ट करने के लिए एक वाद विवाद किया गया। इसका विषय था **'गरीब का पेट शिक्षा से नहीं रोटी से भरता है।'** इस पर सामूहिक चर्चा हुई। इस चर्चा से जिस तरह के विचार आ रहे थे उसमें गरीब के लिए रोटी शिक्षा से ज़्यादा ज़रुरी थी। क्योंकि गरीब मुश्किल से रोटी के लिए पैसा ही जुटा पाता है तो शिक्षा के लिए वो कहां से पैसा लाए। जबकि दूसरा पक्ष यह कह रहा था कि भूखे तो कई दिन रहा जा सकता है पर बिना शिक्षा के गरीब को हर क्षण शोषण का शिकार होना पड़ता है।
यह भी बता उठाई गई कि भ्रष्टाचार और शोषण हमेशा इन्हीं शिक्षित वर्ग से होता है। ऐसा नहीं है कि शिक्षा उनके लिए ज़रुरी नहीं पर वास्तव में उन्हें किस तरह की शिक्षा मिला। इस पर भी सोचने की ज़रूरत है। प्रोब रिर्पोट में देखा है कि एक गरीब के लिए शिक्षा बहुत ही मंहगी है। ना ही उसके पास समय है ना ही कोई साधन जिसके सहारे वह पढ़ाने के लिए समय निकाल सके। दूसरी तरफ उसे यह एहसास है कि जिस तरह की 'मुफ्त' शिक्षा उसे या उसके बच्चों को दी जाती है उससे नौकरी या कोई दूसरा काम मिलना मुश्किल है।

इस चर्चा से सभी प्रतिभागियों के अंदर उथल–पुथल हुई कि प्रशिक्षणगण हमें बताएं कि आखिर गरीब के लिए क्या ज़रुरी है? प्रतिभागियों में यह संशय अंत तक रह गया। इस तरह की स्थिति में प्रतिभागियों को लाना यह प्रशिक्षणगण की नीति थी। किसी एक सही जवाब को न देकर प्रतिभागी को हर पहलू पर सोचने–समझने की प्रक्रिया में डाला गया। जब तक वह मुद्दे के हर पहलु को ध्यान से नहीं समझेंगे तब तक वो उस समस्या की गहराई को नहीं जान पाएंगे। अतः किसी भी मुद्दे का विश्लेषण करने की क्षमता प्रतिभागियों में होनी चाहिए।

इसी विषय से संबंधित एक और लेख प्रतिभागियों को पढ़ने को दिया गया। जिसका नाम था **'किसान से मजदूर'**। इस लेख में मातादीन नाम का एक किसान होता है, उसके किसान से मजदूर बनने के चक्र को दर्शाया गया था। इस लेख पर प्रतिभागियों के जवाब काफी मिले जुले थे। एक प्रतिभागी का कहना था कि अगर मातादीन शिक्षित होता तो खेत बिकने के बाद कुछ काम कर लेता जिससे वो कर्ज़ से बच जाता। इस पर कुछ प्रतिभागियों की प्रतिक्रिया थी कि पढ़ा लिखा होने पर लोग छोटे–छोटे काम करने में शर्म करते हैं। और पढ़ने लिखने से नौकरी मिल ही जाती है। अतः हमारी शिक्षा ही इस तरह की हैं जो असमानता पैदा करती है।
वर्ग और शिक्षा के संबंध में जितनी भी गतिविधि और चर्चाएं हुई उससे यह स्पष्ट हो रहा था कि प्रतिभागियों की अपनी समझ तो वर्ग पर है। लेकिन शिक्षा में किस तरह से वर्ग का प्रभाव होता है इस पर अभी उनकी अपनी समझ को और व्यापक करने की करेशिश की गई।

जाति और शिक्षा का संबंध

वर्ग पर जितनी भी चर्चाएं हुई थी उसमें यह बात स्पष्ट हुई कि वर्ग और जाति का मुद्दा एकदुसरे से जुड़ा है। लेकिन हमारी चर्चाओं में वर्ग से ज़्यादा जाति से जुड़ी समस्याएं उभर कर आई। जाति आधारित भेदभाव समाज में ज्यादा खुले रूप से दिखाई पड़ती है। जो जितनी ही निम्न जाति का हैं उसके लिए समाज में उतनी ही सीमाएं हैं। और अपनी जाति के वज़ह से जहां एक तरह इन्हें इन सीमाओं के अंदर रहना पड़ता है। वहीं दूसरे शिक्षा से भी इन्हें दूर रखने की कोशिश की जाती है।

प्रकियाएं और गतिविधियां

प्रतिभागियों को **'जूठन'** नाम का लेख पढ़ने को दिया गया। जो **'श्री ओम प्रकाश वाल्मिकी'** की आत्म कथा पर आधारित था। लेखक जाति से भंगी थे और जब तक इनकी अर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी गांववाले काफी बुरा व्यवहार करते थे। जब वाल्मिकी जी एक प्रसिद्ध लेखक बन गए और उनकी आर्थिक स्थिति भी अच्छी हो गई तब सब जगह उनकी इज्जत होने लगी।
इस लेख पर **सवाल था कि लेखक के लेखक बनने की वजह से उनकी इज़्जत बढ़ी या फिर उनकी आर्थिक स्थिति सुधरने से**।
ज़्यादातर प्रतिभागियों के ये विचार थे कि वाल्मिकी जी की इज़्जत ना तो जाति की वज़ह से थी ना ही उनके लेखन से। उनकी इज़्जत उनके पास पैसा आने पर बनी। निम्न जाति का होने की वजह से उन्हें शिक्षा प्राप्त करने में काफी संघर्ष करना

पड़ा था। बचपन में उनकी आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी। तो उनके घर रूकने की बात तो दूर की हैं कोई उस तरफ मुड़ कर भी नहीं देखता था। अगर गांव में कोई शादी व्याह होता तो उन्हें सबसे अंत में और वो भी सब का जूठन खाना पड़ता था।

जाति के मुद्दे पर ही प्रकाश डालता हुआ एक और लेख **'इतवा मुंडा ने जीती लड़ाई'** प्रतिभागियों को पढ़ने को दिया गया। इस चर्चा में यह बात एकदम उभर कर आई कि निम्न जाति के लोगों का समाज में कोई स्थान नहीं है। अगर वो शिक्षा प्राप्त करना भी चाहते हैं तो इसके लिए उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ता है। रही बात सरकारी नियमों की तो, बस वो कागज़ी पन्ने बन कर रह जाते हैं। और ज़्यादातर सरकारी नियम, कानून उच्च वर्ग को ध्यान में रख कर ही बनाएं गए है।

इस चर्चा में एक रोचक मोड़ तब आया जब बात आरक्षण के मुद्दे पर हुई। सदियों से इन जातियों को शिक्षा से ही नहीं समाज के हर एक पहलू से दूर रखा गया है। और यह माना जाता रहा है कि निम्न जाति के लोगों को कोई भी अधिकार नहीं है। कदम–कदम पर उन्हें प्रताड़ित किया जाता है। समाज में इनकी स्थिति को सुधारने के लिए ही आरक्षण दिए गए थे। आरक्षण तो कर दिया गए लेकिन इसका जो लाभ निम्न जाति के लोगों को मिलना चाहिए वो सही मायने में क्या मिल पा रहा हैं? क्या यह राजनैतिक दांवपेंच का हिस्सा तो नहीं बन गया? आरक्षण के मुद्दे पर प्रतिभागियों की सहभागिता बहुत कम ही थी। सिर्फ प्रशिक्षणगण ही बातें कर रहे थे। जिस पर ज़्यादातर चर्चा प्रशिक्षणगणों के बीच में ही सिमट कर रह गई।

वर्ग और जाति के मुद्दों के साथ एक और मुद्दे को लिया गया था वो था – लिंग विभेदीकरण का मुद्दा।

लिंग और शिक्षा

लिंग का प्रभाव शिक्षा पर किस तरह से हैं इस पर भी बात हुई। जब हम शिक्षा और वर्ग की बात कर रहे थे तब हमने कुछ प्रोब रिर्पोट के आंकड़े प्रस्तुत किए थे। उसी समय प्रोब रिर्पोट से एक और आंकड़ा प्रस्तुत किया गया था कि शिक्षा पर लिंग विभेदीकरण किस तरह से होता है। प्रोब रिपोर्ट में स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि और न सिर्फ शिक्षा में बल्कि यह विभेदीकरण पाठ्यक्रमों में भी दिखाई देता है।

इस प्रकार विभिन्न गतिविधियों एवं चर्चाओं के माध्यम से लिंग विभेदीकरण पर संवेदनशील समझ बनाने की कोशिश की गई। लिंग पर चर्चा के समय अधिकांश

प्रतिभागियों ने पूर्णतया अपने आपको बंद करके रखा था। जैसे कि वे ऐसे विभेदीकरण से तो दूर हैं और ऐसा लग रहा था कि उनके घर एवं रिश्तों में लिंग की कोई समस्या नहीं है। ये अपने को ऐसे प्रस्तुत कर रहे थे जैसे कि विभेदीकरण वाले तो कोई और ही है। ज़्यादातर प्रतिभागियों की स्थिति ऐसी ही थी। वो बहुत ही नाप–तौल कर बोल रहे थे। पर प्रशिक्षणगण की कोशिश यही रही कि ये मुद्दा उनका नहीं हमारा बने। और अपने अंदर से ये बात तो निकाल ही दें कि लिंग का विभेदीकरण सिर्फ निम्न वर्ग/जाति के परिवारों में ही होता है। ऐसी बात नहीं है हम शिक्षित हैं तो ऐसा हमारे घरों में ही होता नहीं है। कुछ समय के बाद प्रतिभागी खुलने लगे। धीरे–धीरे ये निकल कर स्पष्ट रूप से सामने आया कि हमारे घरों में ही नहीं उच्च वर्ग के घरों में भी लिंग विभेदीकरण होता है।

इस पर और चर्चा के लिए एक गतिविधि करवाई गई। जिसमें **'रामवती'** की सच्ची घटना को सुनया गया। जो इस प्रकार थी –
रामवती प्रतिदिन अपने पति से पिटती थी। एक दिन रामवती का पति उसे बुरी तरह मार रहा था। रामवती की आवाज से लग रहा था जैसे वह मर ही जाएगी। आवाज को सुन एक पडोसी दौड़ा आया। उसने रामवती को उसके पति से बचाया। एक थप्पड़ भी मारा। पर रामवती ने पड़ोसी की शिकायत पंचायत में की। पंचायत ने पड़ोसी को सजा सुनाई। और उसे जुर्माना भरने को कहा। प्रतिभागी समूहों को यह बताना था कि इस पूरे प्रकरण में दोषी कौन है, पति, पड़ोसी रामवती या फिर पंचायत।
प्रतिभागियों के जो तर्क आ रहे थे वो इस प्रकार से थे कि इस पूरे प्रकरण में पंचायत दोषी था। पंचायत को पड़ोसी को सजा नहीं देनी चाहिए थी। वहीं दूसरी तरफ कुछ प्रतिभागियों का कहना था कि अगर रामवती पंचायत के पास नहीं जाती तो समाज उसे दोषी समझता। जरूर पड़ोसी का उससे संबंध है। रामवती और पड़ोसी को लेकर तरह–तरह की बातें होती। कुछ प्रतिभागियों ने रामवती को दोषी ठहराया। इस पूरी चर्चा में फिर वहीं बात उभर कर सामने आई कि प्रतिभागी जो भी तर्क दे रहे थे उससे लग रहा था कि इस तरह की बातें निम्न वर्ग, जाति और अशिक्षित परिवारों में ही होती है। उनके अपने घरों में नहीं होती है। लिंग से सम्बंधित जो भी समस्याएं हैं वो किसी तीसरे की है।

इसी से संबंधित एक दूसरी गतिविधि थी **'फ्लेविया की कहानी'** जो एक सच्ची

घटना पर आधारित थी। इस कहानी में फ्लेविया एक उच्चवर्ग और शिक्षित परिवार से थी और उसका पति भी शिक्षित था। उसके बावजूद वह अपनी पत्नी पर तरह–तरह की हिंसा किया करता।
फ्लेविया की कहानी को प्रतिभागियों को पढ़ने को दिया गया। और उस पर चर्चा करवाई गई। इससे जिस प्रकार की बातें उभर कर आईं उससे यह बात स्पष्ट हुई कि प्रतिभागी जिसे तीसरे तबके का या निम्नवर्ग या अशिक्षितों का मुद्दा समझ रहे थे वह तो उच्च वर्ग और जातियों में भी होता है। कुछ प्रतिभागियों ने अपने अनुभव भी बताएं कि किस तरह से उनके घरों में उन पर हर बात पर रोकटोक लगती हैं, उन्हें अकेले बाहर आने जाने की इजाजत नहीं है। हमारे घरों का इसलिए नहीं दिखता क्योंकि हम उसे छुपा कर रखते है। ऐसा नहीं हैं कि औरतों और लड़कियों के साथ शोषण और घरेलु हिंसाएं, सिर्फ निम्नवर्गों में ही होती हैं। यह उच्च वर्गों में भी होता हैं।

इस चर्चा से एक बात यह तो स्पष्ट दिख रही थी कि लिंग को लेकर जो असामनताएं हैं वह हर वर्ग और हर जाति में है। और इसी से यह सवाल जुड़ गया कि हम किशोरियों और औरतों के साथ काम करते हैं और हमेशा घरेलु हिंसा, मारपीट, शारीरिक शोषण, यौन हिंसा से संबंधित मुद्दे आते ही रहते हैं। अतः ऐसे मुद्दों पर बात गहराई से बात करना आवश्यक है।
यह फर्क सिर्फ घरों में ही नहीं, बल्कि शिक्षा के क्षेत्र में भी दिखता है। हमारे पूरे समाज में जिस तरह की शिक्षा दी जाती है उसमें लिंग विभेदीकरण किस तरह से किया जाता है इसे जो उभारने की कोशिश की गई। गांव की महिलाओं और किशोरियों के लिए किस तरह की शिक्षा सार्थक है? हमारी शिक्षा की पठ्न–पाठ्न समाग्री कैसे समाज के पूवार्पग्रहों को बल देती हैं। इसी पर समझ बनाने के लिए कुछ गतिविधियां की गई।

लिंग–जाति–वर्ग और शिक्षा

प्रतिभागियों को किताबों से कुछ पाठ दिए गए। इन पाठों में प्रतिभागियों को यह देखना था कि औरत, अशिक्षित, शिक्षित, गरीब, और गांव के लोगों के प्रति क्या नज़रिया है। उनके बिन्दू ओं को एक चार्ट पर दर्शाया गया। यह बात निकल कर आई कि हमारी शिक्षा में और खास कर हमारे पाठ्यक्रमों में लिंग, जाति और वर्ग का

भी विभेदीकरण दिखाई पड़ता है। अतः कहीं न कहीं हमारी शिक्षा भी इस भेदभाव के लिए ज़िम्मेदार है। जैसेः– औरतों में हमेशा आर्दशता, कोमलता, लज्जाशीलता के गुण दिखाए जाते हैं। वही आदमियों को ताकतवर के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। या जो अशिक्षित या गरीब है उन्हें अपराधी, गन्दगी में रहने वाले की छवि में दर्शाया जाता है। हमारी शिक्षा के माध्यम से ही हमें विभेदीकरण की शिक्षा मिल रही है। पूरी शिक्षा व्यवस्था में वर्ग जाति और लिंग को लेकर एक गैरबराबरी का माहौल है। अतः शिक्षा में इस गैरबराबरी को हम कैसे देखते हैं इस पर एक कोशिश की गई।

विश्लेषणात्मक क्षमता

दूसरे उद्देश्य के अनुसार सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में, पढ़ाने के तरीकों में रचनात्मक समझ बनाने के लिए, शिक्षकों/शिक्षिकाओं की आत्मछवि के साथ–साथ तार्किक क्षमता एवं आत्मविश्वास को मजबूत करना था। इस उद्देश्य के अनुसार शिक्षिकों में किस तरह की क्षमताएं होनी चाहिए, पाठ्यक्रम को लेकर, गतिविधियों को लेकर, जिससे सीखने–सीखाने की प्रक्रिया में एक आनंद आए। इसके लिए प्रतिभागियों के अपने जीवन के अनुभवों से शुरूआत की गई – उन्होंने किस तरह की शिक्षा प्राप्त की, उनके शिक्षक कैसे थे, उनमें क्या–क्या क्षमताएं थी।

शिक्षकों की क्षमाता

प्रतिभागियों से ये पूछा गया कि आप अपने अनुभव के आधार पर बताएं कि आपको कौन सा शिक्षक/शिक्षिका सबसे अच्छी लगी। उसमें कौन–कौन से गुण थे। इस आधार पर बहुत ही रोचक बाते सामने आई जैसे –

- शिक्षक के पढ़ाने का तरीका अच्छा था।
- हमारी क्षमताओं को प्रोत्साहन देती थी।
- बराबरी का रिश्ता था।
- विषय पर एक प्लान बना कर आती थी।
- अनुशासन का रिश्ता था।
- घरवालों से संबंध रखती थीं/पूछताछ करती थीं।

इन बिन्दूओं को देखने से यह ज्ञात होता है कि सीखने वाले हमेशा अपने शिक्षक का मूल्यांकन करते हैं। दूसरा यह कि सीखने वाले अपने उन शिक्षकों को याद रखते हैं जिनके पढ़ाने की शैली अच्छी होती हैं और जो सीखने वाले के साथ बराबरी का

रिश्ता रखते हैं। या फिर उन्हें याद रखते हैं जिनसे उन्हें डर लगता था जो कक्षा में कड़ा अनुशासन रखते हैं, जो हमेशा गृहकार्य देखते थे या फिर जो घरवालों से उनकी शिकायत कर देते थे। अतः इससे यह बात उभर कर आई कि आखिर एक शिक्षिक में ऐसे क्या गुण और क्षमताएं होने चाहिए, जिससे सीखने–सीखाने की प्रक्रिया मनोरंजक हो। चूंकि हम भी सीखने–सीखाने की प्रक्रिया में जुड़ने जा रहे हैं तो यह ज़रुरी है कि हमारे अंदर कौन सी क्षमताएं हों। साथ ही किशोरियों और महिलाओं में किस तरह की क्षमताएं बढाएंगे और उसके लिए किस तरह ीक उसे हम जाने । गतिविधियों को करने की ज़रुरत होगी। पर इन सबसे से पहले यह जानना ज़रूरी है कि हम सीखते किस तरह से हैं। अतः इसके लिए यह जरूरी था कि प्रतिभागी बताएं कि हम सीखते कितने तरह से है।

प्रतिभागियों के अनुसार – एक तो हम अनुभवों से सीखते हैं। दूसरा हमारे अंदर कुछ ऐसे गुण होते हैं जिनसे हम सीखते हैं। कुछ प्रतिभागियों ने कहा कि मानसिक क्रियाएं होती है। जिससे भी हम सीखते है। कुछ प्रतिभागियों का कहना था कि अभ्यास कर के सीखते है।

इस चर्चा से यह बात स्पष्ट हुई कि हमारे अंदर कुछ खास क्षमताएं होती है। पर क्षमता का अर्थ वो क्या समझते है। उनकी नज़र में क्षमता क्या होती है। प्रतिभागियों ने कहा –
क्षमता का मतलब योग्यता, कौशल, ताकत, हिम्मत, गुण, क्रिया। क्षमताओं पर चर्चा करके कुछ बिन्दू उभरे जो इस प्रकार से है।

- कुछ क्षमताएं जन्मजात होती है
- कुछ क्षमताओं को अभ्यास के द्वारा अपने अंदर लाया या बढ़ाया जा सकता है।
- सबमें एक समान क्षमताएं नहीं होती है।

जब हम क्षमताओं की बात कर रहे थे तो सभी प्रतिभागी ने क्षमता को बच्चों के संदर्भ में ही लिया। कि बच्चों में तरह तरह की क्षमताएं होती है। प्रशिक्षकगण ने प्रतिभागियों से पूछा कि आप बार–बार बच्चों का संदर्भ क्यों दे रही है। जबकि हम किशोरियों और महिलाओं के शिक्षा के संदर्भ में कार्य करने जा रहे हैं। किशोरियों और महिलाओं का अपना एक अनुभव होता है। उनमें सिर्फ पढ़ने–लिखने की क्षमता नहीं होती हैं। आप किशोरियों और महिलाओं को संदर्भ में रख कर के इनके बारे में

सोचना शुरू करे कि हममें ऐसी कौन सी क्षमताएं होनी चाहिए जिससे हम महिलाओं और किशोरियों की क्षमता का विकास कर सके। क्षमता पर हुई चर्चा के आधार पर एक गतिविधि करवाई गई कि जिसमें प्रतिभागियों को अपनी कोई भी दो क्षमता बतानी थी। फिर एक चर्चा कर सभी क्षमताओं को लिखा गया जो इस तरह से थी।

- दूसरों के दुख को सुनना
- क्षेत्र में अकेले जाने की क्षमता
- पैदल चलना।
- ऊंचाई पर चढ़ना
- मिटिंग को अकेले चलाना
- गाना, बजाना, नाचना
- कविता लिखना
- किसी भी व्यवस्था को संभालना

प्रतिभागियों ने ये जो सारी क्षमताएं बताई उसके आधार पर यह चर्चा हुई कि जब हम में ये सारी क्षमताएं हैं तो ऐसी कौन सी शक्ति हमारे अंदर हैं जिससे यह सारे काम हो जाते है। इससे कुछ बाते और सामने आई –

- आत्मविश्वास की क्षमता
- निर्णय लेने की क्षमता
- विषय की समझ
- लक्ष्य की स्पष्टता
- अवलोकन की क्षमता
- विश्लेष्ण करने की क्षमता

इन क्षमताओं के आधार पर क्षमताओं को परिभाषित किया गया – हम किसी भी क्रिया को क्षमता तब कहने लगते हैं जब वह एक निश्चत सीमा से कुछ आगे बढ़ जाती है।' जैसे पैदल तो सभी चलते हैं पर लगातार 4.5 दिनतक चल पाएं तो उसे हम अपनी क्षमता कहते है।

क्षमता से ही संबंधित दूसरी गतिविधि थी कक्षा में बैठे प्रतिभागियों में से किसी एक का चित्र बनाना था। जब सबने चित्र बना लिया तो सबके चित्र एक दीवार पर लगा दिए गए। फिर सबको यह बताना था कि ये चित्र किसके है? इस गतिविधि से यह निकल कर आया कि चित्र बनाने की क्षमता सबमें हैं पर ज़रूरत है उसे बढ़ाने की।

जैसे किसी भी चित्र बनाने के लिए ज़रूरी है उसको ध्यान से देखना, उसकी बारीकियों को समझना उसकी क्या विशेषताएं है। अगर हम इन चीज़ों का अभ्यास करते हैं तो हमारे अंदर चित्र बनाने की क्षमता आ जाती है। प्रतिभागियों के अनुसार – इसका मतलब हमारे अंदर हर प्रकार की क्षमता होती है पर जब जैसी ज़रूरत पड़ती है उसे हम अभ्यास में लगा कर उपयोग करते है।

किशोरियों की क्षमता

ये तो थी शिक्षिकों सें संबंधित क्षमताएं कि शिक्षकों में इस तरह की क्षमताएं होनी चाहिए। पर किशोरियों और महिलाओं में हम किन तरह की क्षमताएं बढ़ाऐंगे। इस पर भी चर्चा हुई ।

- झिझक दूर करने की क्षमता को बढ़ाना
- रचनात्मक क्षमता
- तर्क शक्ति को बढ़ाना
- अवलोकन की क्षमता
- सह सम्बंध बढ़ाना
- विश्लेषणात्मक क्षमता
- पढ़ने की क्षमता
- लिखने की क्षमता
- याद रखने की क्षमता

प्रतिभागियों द्वारा बताई गई इन क्षमताओं से यह तो मालूम हो रहा था कि वो किशोरियों और औरतों के आत्मविश्वास बढ़ाने की क्षमताएं तो बढ़ाएंगी। पर पढ़ने–लिखने की कौन सी ऐसी क्षमताएं होती हैं। और उनका विकास वो कैसे करेंगी या फिर काल्पनिक क्षमताएं क्या होती हैं इस पर कोई समझ नहीं दिख रही थी। प्रशिक्षणगण ने जब इन क्षमताओं के बारे में पूछा तो वो चुपचाप थी। शायद यह उनके दायरे के बाहर ही था। वो यह तो कह रही थी की उन्हें किताब पढ़ानी हैं। पर उसके पीछे हट कर, किताब के पीछे कौनसी क्षमताओं को जोड़ेगी वहां तक नहीं पहुंच पा रही थी।

अतः प्रशिक्षणगण की यही कोशिश रही की प्रतिभागियों की इन क्षमताओं पर एक समझ बनना। इस पर हुई चर्चाओं के अनुसार – यह नहीं सोचना चाहिए कि अगर

पढ़ने–लिखने की क्षमता को बढ़ाना हैं सिर्फ उन्हें पढ़ना लिखना ही आना चाहिए। उनमें पढ़ने लिखने की किन–किन क्षमताओं को हम बढ़ा सकते हैं इसको भी सोचना चाहिए। जैसे अक्षर और मात्रा का ज्ञान, कहानी, कविता, लेखों को समझ कर पढ़ना, अच्छी रफ्तार से पढ़ना, एक शब्द के कितने अर्थ हो सकते है शब्दों का जानना वाक्यों से क्या सह संबंध है, इन क्षमताओं को बढ़ाना।

महिलाओं और किशोरियों में स्तर के आधार पर क्षमताएं उभारना

क्षमताओं को बढ़ाने में यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि किस स्तर पर कौन सी क्षमता को बढ़ाना। महिलाओं/किशोरियों में अनुभव तो है, किसी भी बात को वो अपने अनुभव से जोड़ती हैं। तब वो निष्कर्ष निकालती है। इस क्षमता को ध्यान में रख कर कार्य योजना बनाई जाएं। दूसरी तरफ लिखने की, पढ़ने की क्षमता उनमें नहीं है।

पाठ से संबंधित गतिविधि

किशोरियों और महिलाओं की क्षमताओं को पाठ के आधार पर किस तरह जोड़ सकते हैं। इस पर समझ बनाने के लिए एक गतिविधि प्रतिभागियों के साथ करवाई गई। जिसमें पूर्व बने पाठों का अवलोकन करना था और बताना था कि इन पाठों में किस तरह की क्षमताएं बढ़ रही हैं। (खुशी–खुशी के पाठ कुछ बांदा एम.एस.के. के पाठ और भी कुछ ज़िलों के पाठ थे)

इसके लिए पांच प्रतिभागियों का एक समूह बनाया गया और सबको दो–दो पाठ दिए गए। प्रतिभागियों को इन पाठों के अभ्यास में यह देखना था कि किस अभ्यास में किस तरह की क्षमताएं बढ़ाई जा रही है, पाठों को किस तरह से विश्लेषित कर रहे हैं, स्तर एवं गतिविधियां को किस तरह से देखते हैं।

प्रस्तुत पाठों के आधार पर यह स्पष्ट हुआ कि प्रतिभागी क्षमताओं को समझ तो रहे हैं पर किन क्षमताओं को किस स्तर पर बढ़ाएंगे इसमें थोड़ी परेशानी हो रही थी। साथ ही गतिविधियों के माध्यम से कैसे जानकारी दे इस पर स्पष्टता नहीं दिखी। इस गतिविधि से एक और बात स्पष्ट हुई कि प्रतिभागियों ने जो भी क्षमताएं बताई वो बच्चों को ध्यान में रख कर बनाई थी।

अतः इसी से संबंधित एक और गतिविधि करवाई गई। जिसमें प्रतिभागियों को यह ध्याान में रखना था उनका पाठ औरतों और किशोरियों के स्तर का बनाया जाएं।

समूहों का 6 के ग्रुप में बांटा गया। और उन्हें पाठ दिए गए। इसमें एक और पहलू जोड़ा गया – प्रत्येक पाठ पर आधरित समूहों को स्तर को ध्यान में रखकर पाठ और अभ्यास बनाने थे –

वे अपने पाठ उन के लिए बनाए –

- जिन्हें अक्षर ज्ञान हैं,
- जो छोटे वाक्यपढ़ लेते हैं।
- रूक–रूक कर पाठ पढ़ते हैं। कटे अक्षर और सयुक्ताक्षर जानते हैं और पढ़ लेते हैं
- छोटे पैराग्राफ पढ़ लेते है।

इन स्तर को ध्यान में रख प्रतिभागियों को अपने पाठ की जानकारी देनी थी । साथ ही इन्हीं स्तर को ध्यान में रखते हुए अभ्यास भी बनाने थे। प्रतिभागियों ने जो भी जानकारी दी वो गतिविधियों पर आधारित थी। और गतिविधियों के विभिन्न रूप भी दिखे। जैसे किसी समूह ने रोल प्ले किया, किसी ने विषय पर कक्षा में चर्चा करा कर, और किसी समूह ने कविता के द्वारा पाठ की जानकारी दी। परन्तु इन गतिविधियों से कौन सी जानकारी दी जा रही थी उसमें स्पष्टता नहीं आ रही थी। किशोरियों और महिलाओं के अनुभवों को ध्यान में रखा ही नहीं गया था। जैसे एक समूह ने प्रस्तुत किया था पेड़ पानी कैसे पीते हैं। यह तो सबको पता है। उसमें हम नया क्या बता रहे हैं। इस बात का ध्यान नहीं रखा गया था। प्रश्नों में कोई स्पष्टता नहीं थी। इसी तरह से एक और समूह को एक पाठ खाना से संबंधित दिया गया था। इस समूह ने पाठ के अभ्यास में एक प्रश्न दिया था – अगर इंसान खाना नहीं खाएगा तो क्या होगा। यह प्रश्न पूछते ही समूहों से कई तरह के जवाब आए जैसे – खाना ना खाने से कमजोरी होगी। हम मर जाऐंगे या फिर बीमार पड़ जाएगें। मगर प्रस्तुतकर्ता ने एक ही जबाव के बारे में सोचा था की हम मर जाएगें। अतः समूह में ही इतने सारे जबाव थे तो यही किशोरियों और औरतों के साथ भी होगा और जबाव कई तरह से आ सकते है। अतः हमें किसी एक जबाव को सोच कर नहीं रखना चाहिए । उसके हर एक पहलू को ध्यान में रखना चाहिए। कुछ प्रतिभागियों ने जो अभ्यास बनाएं थे वो उसी स्तर के थे। इसके आगे की जो क्षमताएं बढ़ानी चाहिए थी उन पर कोई अभ्यास नहीं थे। या फिर उनके स्तर से कम थी। पर प्रतिभागियों द्वारा किया गया कार्य काफी सराहनीय था। अतः यह गतिविधि (क्षमताओं और पाठों में

गतिविधियां बनाना और स्तर को ध्यान में रखने) इसलिए दी गई क्योंकि एक तो समूहों में एक दूसरे के कार्यो को देखे और उस पर अपने विचार दे। खुद करने से प्रतिभागियों की अपनी एक समझ पाठ पर बनेगी। और यह मालूम होगा कि उन्हें कहां पर परेशानी आ सकती है।

अभ्यास में एक और कमी दिखाई दी।

1 प्रतिभागियों ने भाषा संबंधित जो भी अभ्यास करवाए थे उसमें स्तर का ध्यान नहीं रखा गया था। व्याकरण या तो बहुत कठिन था बहुत ही सरल। अतः पाठ बनाने से पहले इस बात का हमें ध्यान रखना चाहिए किस समूह के साथ हम कार्य करने जा रहे है।

2 दूसरा हमारी तरफ से जो भी जानकारी दी जा रही हैं उसमें सीखने वाले की भी भागीदार होनी चाहिए। इसके लिए शिक्षिक की जानकारी किसी भी चीज के लिए स्पष्ट होना ज़रूरी है। ऐसा नहीं कि शिक्षिकों के पास जानकारी नहीं है पर आवश्यकता हैं उसे उनके भाषा के अनुसार छोटा करने की और सरल तरीके से समझाने कीं।

3 अगर किसी जानकारी या मुद्दे पर किशोरिया और औरतें अपने अनुभवों को बता रही हैं तो उसे ध्यान से सुनें और उसके आधार पर जानकारी दे। औरतें जहां रूक रही है वहां पर हम जुड़ सकते है। और फिर उसमें नई चीजें डालें।

4 पढ़ने लिखने से संबंधित अभ्यास ज़्यादा करवाएं।

5 किसी भी कक्षा में जाने से पहले जो भी पाठ पढ़ाना है उसकी पूर्व तैयारी कर लेनी चाहिए। और 6 पाठ से संबंधित कार्यपत्रा हों तो सबसे अच्छा होगा।

7 पाठ के साथ यदि अभ्यास में सामाजिक समस्याओं पर चर्चा भी होना ज़रूरी है।

शिक्षा और थियेटर का समन्वय

क्षमताओं को उभारने के लिए एक विशेष सत्र चलाया गया था। जिसका नाम था थियेटर सत्र। इस सत्र का उद्देश्य था कि कैसे हम अपनी रचनात्मकता और कल्पनाशक्ति का उपयोग कर सकते है। इस सत्र के माध्यम से प्रतिभागियों में खुद की क्षमता और विभन्न तरह की क्षमताओं को बढ़ाने का अवसर मिला।

- अनुशासन
- खुद पर नियंत्रण
- कल्पना शक्ति का विकास करना
- विश्लेषण करना
- खुद को व्यक्त करना
- ध्यान देना
- सोचना
- समूह में कार्य करना

थियेटर सत्र में प्रतिभागियों को समूहों में बांट कर कार्य करवाया जाता था।

कोई भी एक विषय समूह को दे दिया जाता था और उस समूह को मिल कर अपने को प्रस्तुत करना होता था। इसी से संबंधित एक गतिविधि थी –
किसी एक वस्तु को हम कितने तरह से उपयोग कर सकते है। इसके लिए प्रतिभागियों का एक गोला बना गया। गोले के बीच में छाता रख दिया। यह निर्देश दिए गए कि अभी तो आप इसे छाते की तरह देख रहे हैं। पर इसका और क्या उपयोग हो सकता हैं। थियेटर सत्र के इस गतिविधि में प्रतिभागियों ने बहुत उत्साह से भाग लियाा। और प्रतिभागियों ने अपनी कल्पनाशक्ति का उपयोग करते हुए छाते को अलग–अलग रूप में प्रस्तुत किया। जैसे किसी ने छड़ी की तरह उपयोग किया तो किसी ने ग्लास, तो कोई बांसुरी, तो कोई तलवार, तो कोई शहनाई या बेलन इत्यादि।
दूसरी गतिविधि थी कोई एक व्यक्ति समूह के बीच आकर कोई एक भूमिका करें और उसी भूमिका के दौरान दूसरा व्यक्ति उससे भी ऊंची भूमिका करें जिससे पहले व्यक्ति को गोले से बाहर निकला पड़ जाए। कुछ बोल नहीं सकते थे केवल मूक अभिनय से करना था। या फिर समूह में बिना एक दूसरे से बात किए कोई दृष्य बनाना।
ढोल की आवाज पर बिना आवाज़ किए अपनी गति को तेज और धीमा करना।

इन सभी गतिविधियों के माध्यम से यह निकल कर आया कि हमारे अंदर क्षमताएं होती है। पर अक्सर विषय हमेशा आगे रहता है। क्षमताओं पर ध्यान नहीं रहता। जब तक इन दोनों में तालमेल नहीं होता हम क्षमता का उपयोग नहीं कर सकते है। अतः जरूरत है विषय के अनुरूप हम क्षमता का उपयोग करें। यह तभी हो पाता हैं

जब हम अपने अंदर एक अनुशासन लाए, विषय को गंभीरता से लें और उसका निरीक्षण बारीकी से करें। अपने को अनुशासन में रखने के लिए इस तरह की गतिविधियों से हम अपने अंदर तरह –तरह की क्षमताएं विकसित कर भी सकते हैं और दूसरों में किस तरह की क्षमताएं हैं इसका भी ज्ञान होता है।

एक और गतिविधि थी। जिसमें प्रशिक्षक समूह द्वारा **'पिटारा'** पत्रिका की एक कहानी **'लायक कौन'** पर आधारित फड़ द्वारा प्रस्तुत किया गया।
कहानी कुछ ऐसे थी कि राजकुमार और राजकुमारी दोनों ने एक जैसी शिक्षा पाई थी पर दोनों काफी अंतर था। जैसे राजकुमारी को तीर–तलवार में मन लगता था और निर्णय भी फटाफट देती थी। लेकिन राजकुमार को जनता के दुख–दर्द सुनने और काफी सोच विचार के हल देने में मन लगता था। और जब राजगद्दी संभालने की बात आई तब एक प्रतियोगिता रखी गइ। जो भी जीतेगा वो राजा बनेगा। जिसमें राजकुमार की हार हुई। राजा ने राजकुमारी को गद्दी पर बैठाया पर जनता ने राजकुमार को राजा बनाया।

इस प्रस्तुती के बाद प्रतिभागियों को बताना था राजकुमार और राजकुमारी में लायक कौन है। यह गतिविधि लिंग पर आधारित सोचकर प्रशिक्षणगण ने की थी पर इस गतिविधि से यह निकल कर आया कि प्रतिभागी यह तो मान ही रहे थे कि राजकुमारी को लड़की होने की वज़ह से राजा नहीं बनाया। इस पर सबकी एक मत थी। पर इस चर्चा से एक बात जो उभर कर आई वो यह थी कि क्षमता के आधार पर ही गद्दी मिलनी चाहिए। दोनों की क्षमता के आधार पर ही प्रतियोगिता करवानी चाहिए। समूह को लग रहा था कि प्रतियोगिता निष्पक्ष नहीं थी। समूह के अनुसार जब सबको यह पता था कि राजकुमार घुड़सवारी, तलवार सब जानता है किन्तु राजकुमारी के जितना पारंगत नहीं है। यह बात भी निकल कर आई कि उस में दूसरी क्षमताएं भी थी। उन क्षमताओं की भी ज़रुरत है राज–पाठ चलाने के लिए । तो प्रतियोगिता बौद्विक स्तर पर भी होनी चाहिए। अतः प्रतिभागियोगियों के कहने का अर्थ यह था कि प्रतियोगिता सन्तुलित नहीं थी। बेहतर होता है कि दोनों की क्षमता को ध्यान में रख कर प्रतियोगिता रखी जाती।

गतिविधियों के प्रति हमारा क्या नजरिया

इन सभी गतिविधियों और प्रक्रियों के बाद सभी प्रतिभागियों में एक तरह के सवाल थे कि उनके पास इतना समय नहीं होता है कि वे गतिविधियां करा पाएं। हमारे ऊपर तो हमेशा यह दबाव बना रहता है कि कोर्स खत्म करें और लड़कियों को पांचवी की परीक्षा दिलवाएं। ऐसी स्थिति में ये सारी गतिविधियां करना बहुत मुश्किल होता है। वह मात्र खेल के रूप में या फिर बोरियत मिटाने का साधन ही रह जाती है। पाठ सिर्फ जानकारी तक ही सीमित रह जाते है।

इस पर प्रतिभागियों की समझ बनाने के लिए उनसे खुद पूछा गया कि जिस तरह की शिक्षा उन्होंने पाई है या उन्होंने जो भी अपनी शिक्षा पर खर्च किया है क्या वे उससे संतुष्ट है। अपनी शिक्षक का अवलोकन या फिर शिक्षा पद्वति पर जो भी कार्य या गतिविधि यहां पर की है उसमें उन्हें कोई फर्क महसूस लगा है। हम ये नहीं कहते कि आप अपने कोर्स से अलग कुछ गतिविधि या जानकारी दें। बल्कि आपने जो पाठक्रम बनाएं हैं। पहले उनका निरिक्षण करें कि जब आपको इसी ढरें पर पढ़ाया गया था तो क्यों आपको वहीं विषय निरस और उबाऊ लगता था। यह एकदम ज़रूरी नहीं कि आप कुछ अलग से करवाए हैं। आवश्यकता हैं, जो भी पाठ आप दें उसमें जानकारी देने का जो भी ज़रिया हैं। उसे आप थोड़ा सा रोचक बनाने के कोशिश करें और इसी जानकारी से संबंधित कुछ और भी जानकारियां दे सकते है। जो जीवन के अनुभवों पर आधारित हों। आवश्कता है खुद को शिक्षक ना समझने की। अगर आप अपने को सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में डालें। तो आप पर पढ़ाने का जो बोझ है अपने आप कम हो जाएगा।

गतिविधियां किस तरह से मदद करतीं हैं इस पर एक प्रसिद्व लेखक **डेबिड आसबरो** का लेख– **अमाप्य गतिविधियों का महत्व'** पढ़ने को दिया गया। डेबिड आसवरों का कहना है कि अगर हम गतिविधियों के माध्यम से सिखने की प्रक्रिया अपनाते हैं तो इससे हम ना सिर्फ सिखने वालों को जानकारी ही देते हैं बल्कि उनमें विभन्न क्षमताएं भी बढाते हैं। ज़्यादातर शिक्षिक गतिविधियों का प्रयोग करते भी है तो वो केवल सीखने वालों को व्यस्त रखने के लिए। उन्हें ब्लैकवोर्ड इसलिए आसान लगता है क्यों कि उसके बाद उन्हें कापियों को जांचने में मेहनत नहीं करनी पड़ती है। अगर हम सीखने वालों को स्वतंत्रा छोड़ दें। उन्हें गतिविधियों के माध्यम से सीखाते हैं तो स्वयं उस कार्य को करने की अपनी ज़िममेदारी पर लेते हुए अनुसाशन रख कर करते है। और उन्हें एक विषय के आधार पर कई जानकारियां मिलती है। इस तरह की शिक्षण पद्वति में शिक्षक ही सर्वज्ञाता नहीं होता है। वो भी सीखने की

प्रक्रिया में जुड़ता है। अतः हमें गतिविधियों को सीखने की प्रक्रिया से अलग नहीं समझना चाहिए।

शिक्षण पद्वति पर एक नज़र

इसी प्रकार प्रतिभागियों की शिक्षा पद्वति पर क्या समझ है या उनका क्या नज़रिया है इस पर कुछ गतिविधियां की गई। जिसमें प्रशिक्षिकगण द्वारा प्रस्तुत किया गया एक लघु नाटक था। यह नाटक आज की शिक्षण पद्वति पर व्यंग करता हुआ था कि आज शिक्षण पद्वति एकदम रट्न्त विद्या पर आधारित है जिसमें ना तो सीखने वालों की क्षमताओ को ध्यान में रखा जाता है ना ही शिक्षक कोई ठोस जानकारी देती है। बल्कि जो सीखने वालों को बुद्विहीन की तरह समझा जाता हैं। यह पूरी शिक्षण प्रक्रिया एक मशीन की तरह हो गई हैं जो एक ही ढर्रे पर चली आ रही है। इस प्रक्रिया में शिक्षक ही सर्वज्ञाता की तरह होता है। इस रोल प्ले को देखने के बाद प्रतिभागियों से जिस तरह के विचार आ रहे थे उससे यह लग रहा था कि वे इस तरह की शिक्षा प्रक्रिया से एकदम नाखुश है। वे अब चाहते हैं कि सीखने–सीखाने की प्रक्रिया एक तरफा ना हो कर दोनों तरफ से हो तो इसके परिणाम काफी अच्छे होंगे।

इसी विषय से संबंधित एक और गतिविध की गई जो कि **रविन्द्रनाथ टैगोर** की **तोता कहानी** पर आधारित थी। इस कहानी को प्रतिभागियों को सुनाया गया। कहानी इस प्रकार थी कि शिक्षा की नीतियां तो हमारे व्यवस्था में बहुत हैं और साथ ही उसके ताम–झाम भी बहुत है। पर इसका सीखने वालों पर क्या असर पड़ता हैं। इस बात का एकदम ही ध्यान नहीं रखा जाता है। इन तामझाम में सीखने वाला कहीं दूर ही छूट जाता है और रह जाती है सारी व्यवस्था। इस प्रकार जो शिक्षण नीति सदियों से चली आ रही है उस पर एक आलोचनात्मक समझ बनाने के लिए यह कहानी सुनाई गई। प्रतिभागियों का कहाना था कि हमें अब ऐसी शिक्षण पद्वति अपनानी है जो सीखने वालों को आत्मनिर्भर बनाए और इन तामझामों को कोई ज़रूरत नहीं रहे।

इन सभी गतिविधियों के बाद प्रशिक्षिकगण ने यह जानने की कोशिश की कि उन्हें यह प्रशिक्षण कैसा लगा। प्रतिभागियों ने बताया कि इस प्रशिक्षण में वे इस लिए आए थे कि उन्हें पाठ बनाने थे। पर जब प्रशिक्षिण शुरु हुआ तो उनके अंदर काफी सवाल थे कि उन्हें क्षमताओं के बारे में क्यों बताया जा रहा है। या जो चर्चा की जा रही है उसका हमें आखिरी हल क्यों नहीं बताया जा रहा है। क्यों उन्हें इस तरह छोड़ दिया जा रहा है। उनको लग रहा था पाठ तो बन नहीं रहे। तो वो किस तरह से

पढ़ाएंगे। इस तरह के कई सवाल उनके मन में थे। पर अब लग रहा है कि पाठ को रूचिपूर्ण बनाने के लिए गतिविधियां डाल सकते है, पाठ अगर क्षमता आधारित हों तो सीखने वाले की रूचि हमेशा पढ़ने में लगी रहती है।

प्रशिक्षण समूह में स्वमूल्यांकन एवं अपनी प्रशिक्षण प्रक्रिया पर नज़र डाली तो यही सुनिश्चित किया गया कि इस प्रकार की प्रशिक्षण पद्यति को ही अपनाया जाएगा। जिसमें प्रतिभागी की भी पूर्ण भागीदारी हो और वो चर्चाओं को बढ़ाने में आगे आएं। ना कि उन पर पूरी प्रक्रिया थोपी जाए। इसी नज़रिए के साथ निरंतर समूह ने प्रशिक्षण समाप्त किया।